संपादकीय

भारतीयता का बदलता परिवृत्त

किसी देश की मुख्य पहचान उसका 'भूगोल' है। सभी भूखंडों की कुछ-न-कुछ विशिष्टता भी होती है। इसके अतिरिक्त नागरिक, सरकार और संप्रभुता आदि आधारभूत अंग हैं, परंतु देश इनसे इतर भी बहुत कुछ है। यह सही है कि इन आधारभूत तत्वों के अभाव में राष्ट्र की बड़ी से बड़ी खासियत का कोई मतलब नहीं हो सकता। भारतीय का मतलब भारत का या भारत से संबंधित होना है, जो व्यक्ति, वस्तु या विचार कुछ भी हो सकता है। भारतीय होने के गुण-क्वालिटी, स्तर-स्टैंडर्ड व वैशिष्ट्य यानी कैरेक्टरिस्टक का यह संकेतक है, यह उस विचारबोध या भावानुभूति का नाम है, जिसमें भारत से, भारतीय तत्वदर्शिता से अभिन्नतः जुड़े होने का भाव प्रकट होता है। भारतीय के गुण, धर्म व विशिष्टता को धारण करना भारतीयता है। भारतीयता विराट भाव है, जिसमें सदियों का लोक व्यवहार, चिंतन-मनन, धर्म-दर्शन का निचोड़-निष्कर्ष है। इन्हें चिन्हित करना आसान नहीं, क्योंकि इनमें अनन्त विविधताएँ हैं, परस्पर विपरीत विचार-व्यवहार भी हैं, जो भारतीयता के स्वरूप को स्थिर नहीं होने देते। और तो और, परंपरागत वर्चस्व वाली भारतीयता पर प्रश्नचिन्ह लगाने वाले, उन्हें कायदे से चुनौती देने वाले और उनसे टकराकर चलने वाले गौण विचार भी भारतीय ही हैं, जो भारतीयता की व्यापकता में अस्पृश्य रही मानवीयता की ओर ध्यान आकृष्ट करा कर अंततः भारतीयता को परिपुष्ट करते हैं। इन सबसे समग्रतः एक बौद्धिक, भावनात्मक, आत्मिक व व्यावहारिक लोकाचार निर्मित होता है, संपूर्ण जीवन दर्शन और जीने की कला विकसित होती है, यही भारतीयता है।

भारत भूमि की संप्रभुता तथा भारतीय लोगों की स्वतंत्रता, उनकी भाषा व संस्कृति तो भारतीयता का प्राथमिक तत्व तो है ही, इसके साथ भारतीय जीवन मूल्यों का निष्ठापूर्वक अनुपालन इसका प्रमुख पक्ष है। भारतीय जीवन मूल्य एकोन्मुखी नहीं, अनंतोन्मुखी है। जीवन की पूर्णता विविधताओं के सामंजस्य में है, इसलिए भारतीयता की अवधारणा जीवन के सभी क्षेत्रों से सन्न्द्ध है। हालाँकि अनेक प्रकाण्ड विद्वानों के मत में भारतीयता का मूलाधार धर्म और अध्यात्म है। यों तो धर्म, अध्यात्म और संस्कृति को यदि विराट फलक पर देखा जाए, तो जीवन-जगत का कोई हिस्सा इससे अछूता नहीं रहेगा। इस प्रकार भी भारतीयता सांस्कृतिक परंपराओं का संपूर्ण सार है, समग्र जीवन पद्धति है।

भारत की आत्मा धर्ममय है, इसलिए भारतीयता में धर्ममयता तो होगी ही।। श्रीअरविंद के अनुसार भी, भारतीयता का प्राण धर्म है, इसकी आस्था धर्म है और भाव धर्म है। ज्वलंत सवाल है कि कौन सा धर्म? निर्विवाद रूप से यह सनातन, जिसे हिंदू धर्म कहा गया, वही धर्म है। स्वामी विवेकानंद की दृष्टि में भी भारतीयता आध्यात्मिकता की तरंगों से ओतप्रोत है। आत्म-आत्मा से लेकर परमात्मा तक से संबद्धता आध्यात्मिकता है। भारत का पूरा चिंतन-मनन आत्मोन्मुखी है, जबकि पश्चिम का मनोन्मुखी। आत्मोन्मुखी का तात्पर्य आत्म और आत्मा दोनों से है। जिस प्रकार मनोविश्लेषण में पश्चिम का सानी नहीं, वैसे ही आत्म व आत्मा के तत्वदर्शन में भारत के पुराने मनीषियों का जोर नहीं। आत्म का विस्तार प्रकृति के कण-कण में, सभी जड़-चेतन पदार्थों में ही नहीं, उसकी पहुँच परमात्म तक है।

वर्तमान भारत में सभी संस्थागत धर्मों को मानने वाले लोग हैं, किंतु इसकी आदि-मूल आत्मा सनातनी हिन्दुत्व है, इसमें संदेह नहीं। कई संस्थागत संप्रदायों व धर्मों में अपने से इतर के धर्मों के बारे में, दूसरों से अपने संबंधों के बारे में बहुत कुछ कहा गया है, लेकिन सनातन धर्म के समक्ष केवल और

केवल अधर्म है, शायद इसलिए भी क्योंकि जब से उसका अस्तित्व है, तब अधर्म के सिवा कोई चुनौती थी ही नहीं। धर्म पूर्णता का नाम है, पंथ व संप्रदाय अपूर्णता का। धर्म का सामाजिक, राजनीतिक व कर्मकांडी भाग है पंथ या संप्रदाय। धर्म संपूर्ण जीवन जीने का सलीका सिखाता है, जबकि पंथ-संप्रदाय दूसरे पंथों तथा संप्रदायों के समानांतर गोलबंद होने, उनसे निबटने, उनसे श्रेष्ठ होने, येनकेनप्रकारेण उन्हें खत्म करने या अपने में पर्यवसित कराने के आधार पर अस्तित्ववान रहता है। लेकिन धर्म की सत्ता बरकरार रखने के लिए पंथ-संप्रदाय को महत्त्व से मुँह नहीं मोड़ा नहीं जा सकता।

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने 'भारतीयता' पर लिखे अपने लेख में कहा है कि 'भारत की आत्मा सनातन है, भारतीयता केवल एक भौगोलिक परिवृत्ति की छाप नहीं है, एक विशिष्ट आध्यात्मिक गुण है, जो भारतीयों को सारे संसार से पृथक करता है। भारतीयता मानवीयता का निचोड़ है, उसकी हृदयमणि है, उसका सिर सावंतस है, उसके नाक का बेसर है।' उनके अनुसार, भारतीयता का पहला लक्षण है सनातन की भावना, काल की भावना, काल के आदिहीन-अंतहीन प्रवाह की भावना और यह काल केवल वैज्ञानिक दृष्टि से क्षणों की सरणी नहीं, काल भारतीयों से सम्बद्ध विशिष्ट और निजी क्षणों की सरणी के रूप में है। यह सनातन की भावना लंबी काल परंपरा की भावना नहीं, काल की अर्थवत्ता की भावना है। सनातन तक पहुँचते-पहुँचते काल की यथार्थता का बोध खो जाता है। निर्मल वर्मा ने भी सनातनता का आधार आध्यात्मिकता को ही माना है, 'यदि भारत का सभ्यताबोध और सांस्कृतिक परंपराएँ आज मौजूद हैं, तो उसका मुख्य कारण वह केन्द्रीय आध्यात्मिक तत्व है, जिसमें इतनी क्षमता और ऊर्जा थी कि इतिहास के निर्मम थपेड़ों के बावजूद वह समस्त प्रभावों को अपने भीतर समाहित कर सका।'

कुछ अर्थ में भारतीयता भारतीय संस्कृति का पर्याय भी है और इस प्रकार भारतीय संस्कृति की जो विशेषताएँ हैं, वही सब भारतीयता की भी प्रवृत्तियाँ हैं। आखिर संस्कृति से रहित या परे भारतीयता की कल्पना कैसे संभव है? प्रभाकर माचवे ने लिखा है कि 'संस्कृति हमारे लिए दार्शनिक, आध्यात्मिक, नैतिक, कलात्मक और प्रवृत्तिगत संसार की अनुगूँज है। वह मूलतः मनुष्य से, प्रकृति से, धर्म से, आत्मा से, विश्व से हमारे संबंधों की प्रकृति सूचित करती है। वह जीवंत मूल्यबोध है।' निर्मल वर्मा ने भारतीय संस्कृति को वैकल्पिक दृष्टि प्रस्तुत करने में समर्थ माना है। संस्कृति समावेशी है और नित नूतनता और पुरातनता का मेल उसमें चलता है। भारतीयता भी समावेशी है, उसमें भी हजारों-लाखों सालों के जीवन मूल्यों का निचोड़ है, वहीं आधुनिकता को भी वह निरंपर आत्मसात करती है। वैसे भी भारतीयता का विशिष्ट गुण है स्वीकार की भावना।

भारतीयता कहने पर बेशक स्थानीयता-राष्ट्रीयता की गंध आती है, देश व राष्ट्र से जुड़े होने का बोध होता है; परंतु भारतीयता की संवेदनात्मक व्यापकता में जागतिकता, वैश्विकता और मानवीयता का उच्चतम भाव-रूप सिमटा हुआ है। यह प्राणिमात्र को अपनी आत्मिकता में समेटता है। भारतीयता के जो मूल्य, तत्व, दर्शन, बोध, व्यवहार, मान्यताएँ व आकांक्षाएँ हैं, वे जगत व जागतिक व्यवहार की नियम संहिताएँ हैं, अतः क्या देशी या भारतीय और क्या अभारतीय या विदेशी - सबके लिए उपयोगी हैं। उसमें वैश्विक चेतना का भाव बिना किसी भेदभाव के सन्निहित है। नई आधुनिक चेतना के प्रादुर्भाव के साथ भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण, विश्वग्राम का निनाद हुआ है, पर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' के रूप में तो यह हजारों-हजार साल से भारतीयता का शिष्टाचार रहा है। भारत कभी ताकत, शक्ति के बल पर अपना प्रसार करने का नहीं सोचा, यह अलग बात है कि बदले में उसे सदियों से आक्रमण झेलने पड़े हैं। भारत ने एकजुट होकर कभी बाहर जाकर प्रहार नहीं किया, पर आंतरिक आपसी

लड़ाइयाँ कम न थीं। आज के भारतदेश के अंदर तब अनेकानेक 'देश' हुआ करते थे और वे आपस में एक दूसरे पर आक्रमण करते ही थे और उसी में संतुष्ट भी थे। इतिहास प्रसिद्ध व वैज्ञानिक साक्ष्यों से सिद्ध महाभारत के युद्ध में, जो दो भाइयों के बीच का ही द्वन्द्व था, जितने लोग मारे गए, उतने में अनेक देश बस जाएँगे।

आधुनिक शब्दावली में जिस विश्वग्राम या भूमंडलीकरण की चर्चा होती है, वह शुष्क सूचनाओं के आदान-प्रदान पर, बाजार-व्यवसाय पर, आयात-निर्यात पर, निवेश-विनिवेश यानी पूँजी लगाने व पूँजी निकालने पर, उत्पादन और उपभोग के आधार-स्तंभों पर टिका है। सूचना, बाजार, व्यवसाय के महत्त्व से कौन इनकार कर सकता है, पर सार्वभौमिकता और वैश्विकता पर आधारित विश्वग्राम कुटुम्ब भाव, आत्मीयता, आत्मिक संवेदना के बिना अपूर्ण है। भूमंडलीकृत विश्व में सभ्यता, संस्कृति एवं भूगोल मात्र का परस्पर जुड़ना यथेष्ट नहीं, वरन् आशा, आकांक्षा का मिलन जरूरी है। जीने के लिए सांसारिक वस्तुओं का उपयोग व उपभोग लाजिमी है, पर उसी पर सिमट कर रह जाना जीवन का संकुचन है। इसी रिक्तता को पाटने के लिए कला, संगीत, साहित्य का अभिधान किया गया है, आत्मोन्मुख व अध्यात्मोन्मुख बनने-बनाने पर जोर दिया गया है -'भारतीयता शारीरिक व भौतिक उपलब्धियों की जगह उन आध्यात्मिक उपलब्धियों की तरफ रूझान है जो मनुष्य को मनुष्य बनाता है। यह संगीत, कला, ज्ञान और निवृत्ति का मार्ग हो सकता है। भौतिकता जीवन जीने के लिए अनिवार्य है, पर इसे ही अंतिम लक्ष्य मान लेना ठीक नहीं है। इससे आगे का जीवन ही श्रेय और प्रेय हो सकता है - इसी चेतना की सीख भारतीयता से मिलती है।' अज्ञेय के अनुसार 'भारतीयता के मूल में जो भावना या भावनाएँ हैं, उनसे मानवीय अस्तित्व की नगण्यता और जीवन की अवज्ञा का पाठ मिलता है।' जीवन चाहे किसी का हो, यथार्थ है, पर सत्य नहीं है और सत्य नहीं होने के कारण देर-सबेर निस्सार लगता है। सत्य शाश्वत होता है, अतः उसी का सार संभव है। इसलिए भोग की जगह त्याग अथवा त्यागपूर्वक भोग करना भारतीयता की पुकार रही है - 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा।'

पश्चिम का चिंतन-व्यवहार का आधार मन, मस्तिष्क और बुद्धि है, जबकि भारतीयता आत्मा, हृदय और भावना से अनुप्राणित है। भारतीयता का कोई पूर्व निर्धारित पैमाना नहीं है। यह दर्शन, विचारोपदेश अथवा कोई तत्व-चिंतन से अधिक आचार-व्यवहार का विषय है। इसलिए यह एकदम छोटी-छोटी चीजों में है और बहुत विराट भाव-रूप में भी अंतर्व्याप्त है। यह एक प्रायोगिक विश्वसनीयता है। भारतीयता का जीवन दर्शन, जीने की कला समूची मानव जाति के लिए उपयुक्त है। भारत सनातन राष्ट्र है और भारतीयता सनातन गति। विद्वानों ने भारतीयता के अंतर्गत 'स्मृति' और 'परंपरा' को प्रमुख माना है; यानी यह स्मृति और परंपरा का प्रवाह है। लाखों सालों के अनुभवों का सार अवचेतन स्तर पर कार्य करता है। लोक संवेदना इसका मेरुदंड है। बहुलतावाद और विविधता में एकता, समन्वय, सामंजस्य और समरसता इसकी पहचान है, लोक के साथ परलोक की भी चिंता है। भारतीयता पूरे बह्मांड का यथासंभव पुरातन विज्ञान है, जिस पर आधुनिक समय में भारतीयों द्वारा शोध नहीं हुआ, पर कदाचित इसी आधार-मूल पर आज के बड़े-बड़े आविष्कार हुए हैं। भारतीयता का कोई पूर्व निर्धारित खाका नहीं है, समय के साथ इसका विकास, परिष्कार और परिवर्द्धन होता गया है। ऐसे में वे बहुत सारे पक्ष जो के भीतर दबे हुए थे या अनुपस्थित थे, उन्हें ठोस स्वर मिला है।

चूँकि भारतीयता एक गतिशील प्रक्रिया है, कल तक जो इसके दायरे में नहीं था अथवा उससे उलट माना जाता था, वह सब न केवल इसका अंग बना है, बल्कि उससे भारतीयता का भाव संपुष्ट हुआ है।

इसकी वर्तमान प्रेरक भूमि में एक ओर आदि-अतीत के अंकुर से प्रस्फुटित होकर लहलहाती फसलें हैं तो वहीं आधुनिकता से सराबोर भविष्योन्मुखता भी है। इसलिए इसे उन-उन चीजों में देखा जा सकता है जो मूलतः भारत की हैं, जिनका भारतीयों के रग-रग में संचार है। मनुष्य के जितने अंतर्भाव हैं, क्रियाकलाप हैं, जीवन संस्कृतियाँ हैं, उनके प्रति एक विशेष नजरिया भारतीयता है। खाना, खेलना, पढ़ना, बोलना, लिखना, सोचना, रोना, हँसना, नहाना, पहनना, चलना, दौड़ना, लड़ना, सोना, चिंतन, आचरण यह सब तो मनुष्य मात्र की नैसर्गिक प्रकृति है। लेकिन क्या यह सही नहीं है कि इन सारे कार्यों का विधान भारत में शास्त्रीय व लोकसम्मत ढंग से निर्धारित है। तमाम आधुनिकतम ज्ञान के बावजूद इनका उल्लंघन दुस्साहस जैसा लगता है। साधारण व्यवहार का एक विशेष तौर-तरीका, लहजा, पद्धति के अतिरिक्त ऐसी बहुत सारी चीजें, जो केवल भारतीय तरीके से संपन्न होती हैं, उनके लिए बजाप्ते विशेष तौर-तरीका, विधि विधान है। इसका अभिप्राय यह नहीं कि भारत से संबंधित कोई भी भारतीय चीज भारतीयता के अंतर्गत आए ही, यह बिलकुल जरूरी नहीं है। वस्तुतः मानव जीवन जिस वैविध्य से परिपूर्ण और संपूर्ण होता है, उसमें सत्व के साथ असत्व, सत्य के साथ असत्य, ज्ञान के साथ अज्ञान, चेतना के साथ जड़ता, सुख के साथ दुख, हर्षोल्लास के साथ शोक, विद्या के साथ अविद्या, लाभ के साथ का हानि, आसक्ति के साथ विरक्ति एकदम पास-पास रहती है। सच तो है कि अज्ञान है, तभी ज्ञान की सत्ता का बोध होता है, अंधकार है, तभी प्रकाश का जरूरत महसूस होती है। इसलिए भारतीयता की श्रेणी में वही चीजें आती हैं, जो भारतीय सत्व की धारा की संवाहिका हो।

भारतीयता का कोई स्थिर मापदंड नहीं है, जिसके निकष पर किसी वस्तु व विचार को भारतीय या अभारतीय घोषित किया जा सके। बहुतों के लिए भारतीयता बहुत गूढ़ चीज है, तो कइयों के लिए अति स्थूल। दोनों ही अपनी-अपनी जगह ठीक हैं। भारतीयता स्थूल भी है, ठीक वैसे ही गूढ़ भी है। जैसे पोशाक बाहरी आवरण है, स्थूल चीज है, यही नहीं वह कमोबेश दिखावा की भी वस्तु है। भारतीयता की दृष्टि से भारतीय पोशाकों की अहमियत से इनकार नहीं किया जा सकता; विशेषकर वैसे माहौल में जहाँ अभारतीय कपड़े ही लोग प्रायः पहनते हों, वहाँ सालाना-दो साला आयोजन में एकआध घंटों के लिए भारतीय परिधान पहन लेना कम मनमोहक व सुकूनदायक नहीं हो सकता। देश और देश के भीतर इन परिधानों को पहनकर या देखकर ऐसा महसूस करने वाले कम नहीं होंगे। आज के माहौल में भारतीय पहनावे को पहनना, संभलना काम के हिसाब से भी टेढ़ी खीर होता जा रहा है। इसलिए विदेशों की बात अलग है, भारत में ये पोशाक कार्यस्थल, ऑफिस, फैक्ट्री से हट चुके हैं, बहुत लोग तो साफ मानते हैं कि भारतीय परिधान आधुनिक कार्यों के उपयुक्त हैं ही नहीं। इसलिए यह कभी-कभी पहने जाने पर ठीक लगते हैं, शायद हमेशा पहने जाने पर उतने अच्छे नहीं लगते। जो लोग धर्म को, अध्यात्म को भारतीयता का वाहक मानते हैं, उनके लिए भी इन परिधानों का आध्यात्मिक, धार्मिक, सांस्कृतिक महत्त्व रहता है। वस्त्र की तरह ही जीवन के सभी क्षेत्रों में भारतीय वस्तुओं-विचारों की महत्ता है। आखिर जो बहुत गूढ़-गहरी चीज है, उसका भी बाह्य स्तर पर कुछ गुण व उपयोगिता होती है। वे गूढ़ इसलिए हैं, क्योंकि उनके स्थूल बाहरी रूप भी ठीक हैं। जैसे पूजापाठ के लिए मन-हृदय की पवित्रता मुख्य है, 'मन चंगा तो कठौती में गंगा'। पर क्या तन की स्वच्छता, निर्मलता, शुद्धता के बिना यह सामान्यतः संभव है? यह जरूर कहा जा सकता है कि यह सब करने के बाद मन, हृदय, भाव शुद्ध हो ही जाए, बिलकुल भी जरूरी नहीं है। भारतीयता का सबसे उज्ज्वल व मजबूत पक्ष भी यही है कि यह समय के मुताबिक चीजों को हृदयंगम करने में सक्षम है।